International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(3): 09-11

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(3): 09-11
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 04-03-2019
Accepted: 08-04-2019

**डॉ. रेनू शुक्ला**
निर्देशक, सहायक प्राध्यापिका, संस्कृत विभाग, डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

**मंजू खूंटे**
शोधछात्रा, सेमेस्टर द्वितीय, एम. फिल. संस्कृत, डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड कोटा, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

**Correspondence**
**डॉ. रेनू शुक्ला**
निर्देशक, सहायक प्राध्यापिका, संस्कृत विभाग, डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

# उत्तररामचरितम् में सामाजिक जीवन का अध्ययन

## डॉ. रेनू शुक्ला, मंजू खूंटे

### प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध पत्र में उत्तरामचरितम् नाट्य काव्य में सामाजिक एवं परिवारिक जीवन का उत्तम रूपान्तरण किया गया है। जिसमें भवभूति ने इस नाट्य काव्य को सामाजिक चेतनाओं एवं पारिवारिक जीवन पर आधारित किया गया है। महाकवि भवभूति ने वैदिक काल से लेकर अपने युग तक के जिन शाश्वत चिन्तनीय विचारों और भावों को चित्रित किया है। उन्होंने मानव जीवन की हार्दिक अनुभूति का सजीव एवं सशक्त अनुवचन प्रस्तुत कर उनके सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन को अभिव्यत किया है। भवभूति ने श्रीराम के पारिवारिक परिकाष्ठा को व्यक्त किया है। जिससे समाज के लिए एक महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत किया है।

भवभूति ने 'उत्तररामचरित' के संयोजन में कवि की मौलिक प्रतिभा एवं उसकी उर्वरा कल्पना शक्ति की सहज अभिव्यक्ति रहती है। नाटक लोक की अनुकृति है, अतः उसमें विभिन्न सामाजिक अंगों का प्रचुर मात्रा में प्रतिनिधित्व वांछनीय है। किसी भी साहित्यकार का साहित्य जीवन और समाज के प्रति उसकी अपनी प्रवृत्तियों, स्वप्नों और आस्थाओं का ही प्रतिफल होता है। वह सामाजिक भावनाओं में प्रविष्ट हो, उनमें अनुस्यूत हो अपनी हार्दिक संवेदना को मुखरित करती हुई उसे प्रतिपादित करती है। महाकवि भवभूति ने अपने नाटकों में पात्रों की विविधता एवं नैसर्गिकता का सुन्दर समन्वय स्थापित किया है। उन्होंने अपने नाटकों में अनेक प्रकार के पात्रों का समावेश किया है।

### उत्तररामचरितम् में सामाजिक जीवन

सम्पूर्ण संस्कृत वाङ्मय ऋषियों, महर्षियों, मनीषियों तथा तत्त्ववेत्ताओं की आदर्श वाणी का समन्वय है। संस्कृत काव्यशास्त्र का आदिकाव्य महर्षि वाल्मीकि की आदिवाणी का प्रस्फुटन है, जो इस चराचर जगत् को अपने कारूण्य और वात्सल्य भाव से आप्लावित करता है। भवभूति ने 'उत्तररामचरित' में राम को समाज के लिए आदर्श राजा के रूप में चित्रित किया है, जिसका प्रमाण इस नाटक में दिखाई पड़ता है।

भवभूति ने सामाजिक दृश्यों का वर्णन ''उत्तररामचरितम्'' में किया है, जिसमें समाज को स्वच्छ स्वरूप देने के लिए राम ने अपने आदर्शों से ही सीता जी को वन जाने को कहा। जिससे राम के सामाजिक जीवन में अनुकूल परिवर्तन आया।

आदिकाव्य रामायण एक ऐसा दर्पण है जिसमें सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, नैतिक, धार्मिक आदि समस्त व्यवस्थाओं का प्रतिबिम्ब परिलक्षित होता है।

> काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा।
> क्रौंचद्वन्द्वियोगोत्थः शोकः श्लोकत्वमागतः।।[1]

आदिकवि की वाणी से एक उन्नत समाज की व्यवस्था का सूत्रपात हुआ जो कालान्तर में किञ्चित् परिवर्तनों के साथ दृष्टिगोचर है। रामायण एक अनन्त ज्ञानराशि है, जिसके द्वारा सम्पूर्ण साहित्य प्रकाशित रहता है। यह एक उपजीव्य काव्य के रूप में अथाह विषयों का स्त्रोत है जिसका अवगाहन अनेक परवर्ती कवियों, विद्वानों के द्वारा किया गया।

उत्तररामचरित नाटक महाकवि भवभूति की कृतियों में सर्वोत्कृष्ट है तथा आदिकाव्य के उत्तरभाग की उपजीव्यता का एक सम्यक् वर्णन है। महाकवि भवभूति की प्रसिद्धि का आधार उत्तररामचरित ही है जिसमें उन्होंने अपनी काव्यगत वैशिष्ट्य को मूलविषय के साथ तारतम्य वर्णन के रूप में किया है। इनके कारूण्य का वर्णन अद्वितीय है।

'उत्तररामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते' ।[2]

महाकवि भवभूति ने रामायण कालीन समस्त विशेषताओं को संस्कृत वाङ्मय के नभमण्डल में नवीन एवं सजीव स्वरूप के साथ प्रतिस्थापित किया। उत्तररामचरित में रामायणकालीन सामाजिक व्यवस्था का आदर्श रूप प्रस्तुत किया गया। सामाजिक व्यवस्था का अनुकरणीय स्वरूप ही आदिकाव्य रामायण का प्राणतत्त्व है।
सामाजिक व्यवस्था व्यक्ति तथा उसके आस–पास उपस्थित वातावरण का सम्मिलित रूप है। स्पष्टतः व्यक्ति सामाजिक व्यवस्था का केन्द्र है, इसी के द्वारा समस्त सामाजिक प्रक्रियायें सम्पन्न होती हैं। व्यक्ति के द्वारा परिवार, परिवार के द्वारा समूह तथा समूह के द्वारा समाज की स्थापना होती है। समाज निर्माण के कुछ विधान होते हैं जिसको आधार मानकर सभी व्यक्ति भूमि, पर्यावरण तथा विचारों का उपभोग करते हैं। रामायणकालीन सामाजिक व्यवस्था के मूलतत्त्व धर्म, आश्रम व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, गुरूकुल व्यवस्था, यज्ञ, तप, संयमित व्यवहार, स्वधर्म पालन तथा राजतंत्रात्मक व्यवस्था थी। कलात्मक कुशलता तथा दार्शनिक विचारों का आदान–प्रदान भी होता था। उत्तरामचरित में रामायणकालीन सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पूर्ण समाज धर्म पर आश्रित था क्योंकि भवभूति ने रामायण को वेदान्त–विवर्त माना तथा त्रिगुणात्मक शब्दब्रह्म के स्वरूप को उद्घाटित किया।

विद्याकल्पेन मरूता मेघानां भूयसामपि।
ब्रह्मणीव विवर्तानां क्वापि प्रविलयः कृतः।।[3]

उत्तररामचरित में रामायण कालीन आश्रम व्यवस्था तथा वर्णव्यवस्था युक्त समाज का वर्णन है। गुरूकुल व्यवस्था की आश्रम पद्धति में संयम, वेदाध्ययन, अस्त्र–शस्त्र ज्ञान की शिक्षा प्रचलित थी। जटा, माला, यज्ञोपवीत धारण कर ब्रह्मचारी वेश में शिक्षा प्रदान की जाती थी।

कुवलयदलस्निग्धश्यामः शिखण्डकमण्डनो।
वटुपरिषदं पुण्यश्रीकः श्रियेव सभाजयन्।।[4]
पाणौ कार्मुकमक्षसूत्रवलयं दण्डोडपरः पैप्पलः।[5]

वर्णव्यवस्था के आधार पर वर्णभेद प्रचलित था। ब्राह्मण श्रेष्ठ वर्ण था इनकी सामाजिक स्थिति अन्य सभी वर्णों से उच्च थी। तप, ज्ञान एवं संस्कार इनका व्यवहार होता था। शिक्षा प्रदान करना इनका अधिकार था।

सिद्ध ह्येतद् वाचि वीर्यं द्विजानाम्।[6]

अन्य वर्णों में क्षत्रिय का स्थान था जो गुरूकुल में वेदों, अस्त्र–शस्त्रों का अध्ययन कर अपने बाहुबल से सामाजिक व्यवस्था का संचालन करते थे।

वाह्वोवीर्यं यत्तु तत्क्षत्रियाणाम्।[7]

रामायणकालीन समाज में शूद्रों की स्थिति दयनीय थी। उत्तर–रामचरित में शम्बूक नामक शूद्र की शिक्षा एवं तपस्या का अधिकार न होने पर तपस्या करने पर अपने प्राण गँवाने पड़ते हैं। अतः शूद्र वर्ण के लोग निकृष्टतम जीवन जीते थे।

शम्बूको नाम वृषलः पृथिव्यां तप्यते तपः।[8]

सामाजिक व्यवस्था में गृहस्थ आश्रम को महत्त्वपूर्ण माना गया है। गृहस्थ जीवन एक संघर्ष का समय होता था। इसमें व्यक्ति अपने आश्रितों यथा पत्नी, बच्चे तथा माता–पिता, परिवार, समाज यज्ञादि कर्मों के साथ सामंजस्य रखता था। सभी आवश्यकताओं की पूर्ति का दायित्व गृहस्थ के ऊपर ही था।

किन्त्वनुष्ठाननित्यत्वं स्वातन्त्र्यमपकर्षति।
संकटा ह्याहिताग्नीनां प्रत्यवायैर्गृहस्थता।।[9]

उत्तररामचरितम् में वर्णित नारी रामायण कालीन नारी का ही प्रतिबिम्ब थी। सामाजिक तंत्र में उसे सीमित स्वतंत्रता थी। जहाँ एक ओर उसे यज्ञादि कर्म करने की अनुमति थी। वहीं उसे समाज में रूढ़िमतों, प्रचलित प्रथाओं, पूर्वाग्रहों पर आधारित कठोर नियमों का पालन भी करना होता है। लोकापवाद, प्रपंच के द्वारा स्त्रियों को कष्टमय, निकृष्ट जीवन भी जीना पड़ता था।

हिरण्यमयी सीता प्रतिकृतिर्गृहिणी कृता।[10]
करूणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी
विरहव्यथेव वनमेति जानकी।[11]

स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में जहाँ एक ओर मर्यादा होती है, वहीं दूसरी ओर अफवाह, अविश्वास और वैमनस्य पर आधारित तिरस्कार। जिससे इन्हें सामाजिक दुर्दशा तथा ताड़ना को झेलना पड़ता है।

सर्वथा व्यवहर्तव्यं कुतो ह्यवचनीयता।
यथा स्त्रीणां तथा वाचां साधुत्वे दुर्जनो जनः।।[12]

रामायणकालीन सामाजिक व्यवस्था पुरूषवादी थी। राजतंत्रात्मक व्यवस्था थी। राजा के द्वारा प्रजानुरव्ज्जन हेतु यज्ञादि–कर्म किये जाते थे। वृद्धावस्था में राजा अपने पुत्र को उत्तराधिकार सौंपकर वानप्रस्थ ग्रहण करता था। राजा लोककल्याण, दुष्टों का नाश तथा प्रजा के कल्याणार्थ अपने कर्तव्यों का निर्वहन करता था। इस प्रकार रामायण काल में राजा व्यक्तिगत उत्थान न कर सामाजिक व्यवस्था के सुचारू संचालन का दायित्व वहन करता था जिसके लिए उसे अपने पुत्र, स्त्री, परिवार आदि का भी त्याग करना पड़ता था।

पुत्र संक्रान्तलक्ष्मीकैर्यद् वृद्धेक्ष्वाकुभिर्धृतम्।
धृतं बाल्ये तदार्येण पुण्यमारण्यकव्रतम्।।[13]
जनस्थाने शून्ये विकलकरणैरार्यचरितै–
रपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।।[14]

राम का सीता के प्रति कितना अगाध प्रेम था, इसकी झलक 'उत्तररामचरित' में मिलती है। एक पत्नीव्रत का साक्षात् मूर्ति है राम। सीता के निर्वासित होने पर अश्वमेध यज्ञ में वे उनकी स्वर्णमूर्ति को सहधर्मचारिणी के रूप में नियुक्त करते है। एक पत्नीव्रत का इससे अधिक उत्कृष्ट उदाहरण संसार में मिलना कठिन है। राजा राम ने लोकतन्त्रीय व्यवस्था को जनसाधारण के लिए रखा है जिसमें हर व्यक्ति अपने विचार को व्यक्त कर सकता है। वे महर्षि वसिष्ठ के उस संदेश की हड़बड़ी में एक विचित्र प्रतिज्ञा कर लेते है कि–

स्नेह दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।।
आराधनाय लोकस्य मुचञ्तो नास्ति मे व्यथा।।[15]

अर्थात् प्रजानुरंजन के लिए स्नेह, दया, सुख तथा जानकी को भी छोड़ते हुए मुझे पीड़ा नहीं है। इससे राम की प्रजा के प्रति कर्तव्य भावना तो पराकाष्ठा पर पहुंच जाती है, परंतु वे इस हड़बड़ी में की गई प्रतिज्ञा में एक गड़बड़ी कर बैठते हैं कि अपने ऊपर सीता के स्वामित्व को विस्मृत कर सीता पर अपने स्वामित्व को आरोपित कर बैठते हैं। वस्तुतः यह हड़बड़ी भी उनका दोष न होकर गुणस्वरूप

ही है, क्योंकि अनेक स्वामित्व एक के स्वामित्व को बाधित कर देता है। सीता का प्रेम आध्यात्मिक होते हुए भी लोकदृष्टि में भौतिक भी है, क्योंकि सीता उनकी शक्ति है, अर्द्धांगिनी है, सहधर्मचारिणी है, धर्मपत्नी है, जबकि लोक का प्रेम भौतिक कम आध्यात्मिक अधिक है। इसी लिए राम ने सामाजिक दायित्वों को निभाते हुए सीता का त्याग किया।

## निष्कर्ष

इस प्रकार महाकवि भवभूति उत्तररामचरित की रचना काल के समय तक समाज के सभी मूल तत्त्वों तथा लक्षणों को रामायणकालीन समाज तथा सभ्यता के उन्नायक आदर्शों से अनुप्राणित करते हैं। उत्तर–रामचरित में वर्णित समाज एवं सभ्यता का वर्तमान समय में दृष्टान्त तो दिया जाता है परन्तु उसका सर्वथा पालन नहीं किया जा रहा है। उत्तररामचरित में वर्णित समाज उन्नत आदर्शों से परिपूर्ण तथा संस्कृति यज्ञ, तप, संस्कार आदि से पोषित थी। रामायणकालीन संस्कृति में वर्णाश्रम व्यवस्था तथा धार्मिक आस्था का प्रचलन था। राजा भी अपने राजधर्म के पालन हेतु सर्वस्व न्यौछावर करने को उद्यत रहता है जिसका उदाहरण सम्पूर्ण ग्रन्थ में पदे–पदे उपदिष्ट है। उस समाज की प्रमुख विशेषता पुरूषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति ही थी जिसके द्वारा वहाँ पर नियम, संयम, व्रत तथा धर्म को ही जीवन का मूल आधार माना गया है। उस सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षा, को बहुत महत्त्व दिया जाता था। गुरूकुल व्यवस्था के अन्तर्गत आश्रम में शिष्यों को वेदों, उपनिषदों, ब्रह्मचर्य व्रत, अस्त्रशस्त्रादि की शिक्षा, निरोगी काया, धर्म की शिक्षा, न्याय, राजनीति एवं दर्शन की अनुकरणीय शिक्षा प्रदान करने का उल्लेख प्राप्त होता है।

## संदर्भ सूची


1. द्विवेदी डॉ. शिवबालक (2010), 'महाकवि भवभूतिविरचितम् उत्तररामचरितम्' हंसा प्रकाशन, नाटाणी भवन जयपुर। 1/12।
2. ध्वन्यालोक– 1/5
3. उत्तररामचरितम्– 6/6
4. उत्तररामचरितम्– 2/वाक्य– 24
5. उत्तररामचरितम्– 4/19
6. उत्तररामचरितम्– 4/20
7. उत्तररामचरितम्– 5/31 1/4
8. उत्तररामचरितम्– 5/32
9. उत्तररामचरितम्– 2/8
10. उत्तररामचरितम्– 2/वाक्य–46
11. उत्तररामचरितम्– 3/4
12. उत्तररामचरितम्– 1/5
13. उत्तररामचरितम्– 1/28
14. उत्तररामचरितम्– 3/47